© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
International Journal of Scientific Research in Science and Technology

जलीय-पर्यावरण की शुद्धता एवं कालिदास के काव्य

डॉ० अवधेश कुमार
(प्रभारी प्रधानाध्यापक)
+ 2 उच्च विद्यालय, महसौरा
लखीसराय, बिहार, भारत

सारांश– यों तो कालिदास ने प्रकृति के सारे उपादानों का अपनी रचनाओं में प्रमुखता से चित्रण किया है; किन्तु जल को उन्होंने सृष्टि की आदि रचना बताते हुए जीवन की मूल भूत आवश्यकता पर केंद्रित किया है। जलीय पर्यावरण मानव ही नहीं अपितु मानवेतर प्राणियों के लिए भी अत्यावश्यक है; जिसे शुद्ध और पवित्र रखना हमारा कर्तव्य और धर्म भी है।

प्रमुख शब्द– जलाशय, वर्षाजल, औषधियाँ, गंगानदी, जम्बूफल, सिन्धुनदी, समुद्र, शचीतीर्थ, मृगतृष्णा, मारीचऋषि।

जलीय–पर्यावरण से मेरा अभिप्राय विभिन्न जलाशयों नदियाँ, झील, झरणे, तालाब, सागर (समुद्र) महासागर आदि से है। ये सभी प्रदूषित होते जा रहे हैं, इसके शुद्धिकरण हेतु आधुनिक विश्व के वैज्ञानिक–समाज को नये सिरे से विचार एवं अन्वेषण करने की जरूरत है। जल जीवन की मूल–भूत आवश्यकता है। इसे जीवन का पर्याय माना गया है जल ही जीवन है। इस पृथ्वी पर जल प्रचुर मात्रा में है। धरातल का तीन चौथाई भाग जल से ही घिरा हुआ है। हलाँकि ताजे जल की मात्रा 2.7% ही है। शेष जल खारा है, उसमें भी शुद्ध पेय जल की मात्रा केवल 1% ही है, जो कि प्रदूषण का शिकार होता जा रहा है। वैज्ञानिक दृष्टि से शुद्ध जल, दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग ऑक्सीजन के मिश्रण से निर्मित होता है। इसे (डिस्टल वाटर) भी कहते हैं। ताजापन चमक, शीतलता, गंधहीन, स्वादयुक्त आदि इसके प्रमुख लक्षण हैं। अशुद्ध जल (प्रदूषित जल) इसके विपरीत अपारदर्शी तथा बालू, मिट्टी, कीचड़ जैसे गंदे पदार्थों से मिले हुए होते हैं। अपशिष्ट पदार्थों का जल में प्रवाह, घाटों पर नहाना–धोना, जली अधजली लाशों को प्रवाहित करना आदि जल के अशुद्धिकरण एवं प्रदूषित होने के मूल कारण हैं।

विभिन्न जलाशयों का प्रदूषण तथा उसका दुष्प्रभाव

श्रोतों एवं भण्डारों के आधार पर जलाशयों को निम्न रूप से विभाजित करते हैं – 1. नदी जल (नदियाँ) 2. झील के जल 3. सागरीय जल एवं 4. भूमिगत जल।

नदियों के जल की प्राप्ति दो प्रधान स्रोतों से होती हैं – वर्षा का जल तथा हिम के पिघलने से उत्पन्न जल (हिमद्रवित जल)। वर्षा–जल (Fresh Rain Water)

जल-प्रदूषण की स्वच्छता एवं हमारी संस्कृति

वेदों में जल–प्रदूषण की समस्या पर विस्तार से प्रकाश पड़ा है। मकान के पास ही शुद्ध जल से भरा हुआ जलशय होना चाहिए –

"इमा आपः प्र भराम्भयक्ष्मा यक्ष्मनाशनीः।

गृहानुप प्र सीदाभ्यमृतेन सहग्निना।।[1]

अर्थात् अच्छे प्रकार से रोगरहित तथा रोगनाशक इस जल को मैं लाता हूँ। शुद्ध जलपान करने से मैं मृत्यु से बचा रहूँगा। अन्न, घृत, दुग्ध आदि सामग्री तथा अग्नि के सहित घरों में आकर अच्छी तरह बैठता हूँ।

शुद्ध जल मनुष्य को दीर्घ आयु प्रदान करने वाला, प्राणों का रक्षक तथा कल्याणकारी है–यह भाव निम्न ऋचा में देखा जा सकता है –

"शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।

शं योरभि सवन्तु नः।।[2]

अर्थात् सुखमय जल हमारे अभीष्ट की प्राप्ति के लिए तथा रक्षा के लिए कल्याणकारी हो। जल हम पर सुख समृद्धि की वर्षा करें। जल चेहरे का सौन्दर्य तथा कोमलता और कान्ति बढ़ाने में औषधि रूप है। भोजन के पचाने में अधिक जल पीना आवश्यक है, यह विचार निम्न ऋचा में है।

आपो भद्रा घृतमिदाप आसन्नश्रीषोमौ बिभ्रत्यापइत्ताः।

तीव्रो रसो मधुपृचामरंगम आमा प्राणेन सह वर्चसा गमेत् ॥[3]

अर्थात्! याद रखिये, जल मङ्गलमय और घी के समान पुष्टिदाता है तथा वही मधुरता भरी जलधाराओं का स्त्रोत भी है। भोजन को पचाने में उपयोगी तीव्र रस है। प्राण और कान्ति, बल और पौरूष देनेवाला, अमरता की ओर ले जानेवाला मूल तत्त्व है आशय यह है कि जल के उचित उपयोग से प्राणियों का बल–तेज–दृष्टि और श्रवण–शक्तियाँ बढ़ती हैं।

एक ऋचा में कहा गया है कि जल से ही देखने–सुनने एवं बोलने की शक्ति प्राप्त होती है भूख, दुःख, चिन्ता, मृत्यु के त्यागपूर्वक अमृत (आनन्द) प्राप्त होता है –

आदित्पश्याम्युत वा शृणोम्या मा घोषो गच्छति वाङ्मासाम्।

मन्ये भेजानो अमृतस्य तर्हि हिरण्यवर्णा अतृषं यदा वः।।[4]

तात्पर्य यह है कि देखने सुनने एवं बोलने की शक्ति बिना पर्याप्त जल के उपयोग के नहीं आती। जल ही जीवन का आधार है। अधिकांश जीव जल में ही जन्म लेते हैं और उसी में रहते हैं।

कृषि–कर्म के महत्त्व को निम्न ऋचा में देखा जा सकता है, किसानों के नेत्र जल के लिए वर्षा ऋतु में बादलों पर ही लगे रहते है –

तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ आपो जनयथा च नः ।।[5]

हे जल! तुम अन्न की प्राप्ति के लिए उपयोगी हो। तुम पर जीवन तथा नाना प्रकार की औषधियाँ, वनस्पतियाँ एवं अन्न आदि पदार्थ निर्भर है। वैदिक ऋषियों ने हिमालय के जल, स्त्रोतो के जल, सदा बहते रहने वाले जल, वर्षाजल, मरूस्थलों के जल, आर्द्र प्रदेशों के जल, भूमि खोदकर प्राप्त किये जाने वाले जल और घड़ो (मिट्टी, लोहा, तांबा, सोना, चाँदी आदि से बने घड़े) में रखे हुए जल–इन विविध प्रकार के जल का वर्णन किया है। उनका कहना है कि ये जल

अपने–अपने स्थान विशेष के लाभकारी खनिजों, औषधियों व द्रव्यों (जैसे–गन्धक, लोहा, अभ्रक आदि) से संयुक्त होने के कारण सबके लिए प्रदूषण व रोगनाशक हों। वेद मुनष्य को चेतावनी देता है कि तू इन जल और औषधियों की हिंसा मत कर (हिंसा से अभिप्राय है दूषित करना या विनष्ट करना) शुद्ध जल के अन्दर अमृत होता है और औषध का निवास होता है। आगे पुनः वेद में कहा गया है कि शुद्ध जल में स्नान और उनका पान शरीर के मलों को बाहर निकालता है, और वे जल ही मानव अन्य प्राणिवर्ग एवं वनस्पति जगत् के रक्षक हो सकते है जो मधुसावी पवित्र एवं पवित्र दायक हों।

जल को प्रदूषित न होने देने तथा प्रदूषित जल को शुद्ध करने के कुछ उपायों का संकेत वेदों में प्राप्त होते हैं –

यासु राजा वरूणो यासु सोमशै विश्वेदेवा यासूर्ज मदन्ति।

वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्टस्ता आपो देवीरिह मामवन्तु।।[6]

अर्थात वे दिव्य जल हमारे लिए सुखदायक हों, जिसमें वरूण, विश्वदेवाः तथा वैश्वानर अग्नि प्रविष्ट है; यहाँ वरूण शुद्ध वायु या कोई जलशोधक गैस हो सकती है, सोम चन्द्रमा सोमलता विश्वेदवाः सूर्य किरणे तथा वैश्वानर अग्नि सामान्य आग या विद्युत हो सकती है। यहाँ यही तात्पर्य है कि इनके प्रदूषित जल को शुद्ध स्वच्छ किया जा सकता है। यजुषों में मंत्रों द्वारा या प्राकृतिक रूप से सूर्यताप को जल पहुँचाना जल–शोधन का एक विशिष्ट उपाय बताया है। यहाँ पर कुशा एक घास विशेष को भी जल शोधक कहा गया है। नदियों के जल यदि अशुद्ध पदार्थो से प्रदूषित हो जाय तो विशाल स्तर पर उन्हें शुद्ध करने के अभियान का संकेत भी वेद में मिलता है ऋग्वेद में उल्लेख किया गया कि –

"यन्नदीषु...परिजायते विषम्।

विश्वेदेवा निरितस्तत् सुवन्तु"।।[7]

अर्थात् यदि नदियों में विष उत्पन्न हो गया है तो सब विद्वान मिलकर उसे दूर कर ले तो सब नदियाँ प्रदूषण रहित हो जाएँ। इस भाँति वेद की दृष्टि में यदि शुद्ध पवित्र जलों से उनका दिव्य गुणों का लाभ लिया जाय तो मानव स्वयं स्वस्थ रहकर अपने आस पास के पर्यावरण को भी स्वस्थ रख सकता है।

महाकवि कालिदास ने अपनी प्रायः सभी कृतियों में विभिन्न जलाशयों नदियों, झील–झरने, तालाबों, सागरों, महासागरों का मनोरम चित्रण किया है, जिनमें उनकी जलीय पर्यावरण के संरक्षण एवं सम्बर्द्धन की भावना भी दृष्टिगत होती है। रघुवंश महाकाव्य के प्रारम्भ में ही कालिदास वर्षा जल का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए इसकी कृषि कार्य में उपयोगिता का वर्णन राजा दिलीप के प्रसङ्ग में करते हैं। भारतीय परम्परा में वर्षाजल का सम्बन्ध इन्द्र से जोड़ा गया है, जो यज्ञादि से प्राप्त हव्य से प्रसन्न होकर जल बरसाते हैं। कालिदास कहते हैं कि राजा दिलीप प्रजा से जो कर लेते थे, वह इन्द्र को प्रसन्न करने के लिए यज्ञ में लगा देते थे क्योंकि उनका यह विश्वास था कि यज्ञ करने से देवता प्रसन्न और पुष्ट होते हैं। इससे इन्द्र भी प्रसन्न होकर आकाश को दुहते थे और जल बरसाते थे। जिससे खेत अन्न से भर जाते थे –

दुदोह गां स यज्ञाय सस्याय मधवा दिवम्।

सम्पद्विनिमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयम्।। – रघु 1.26

नवम सर्ग, जिसमें राजा दशरथ का मृगयावर्णन किया गया है, में कालिदास ने नगर में निवास करनेवाले लोगों के अपने–अपने गृह–परिसरों में तड़ागों अथवा बावलियों के होने का संकेत दिया है। इस प्रसंग में कवि कहते हैं कि नागरिकों के घरों में बनी हुई बावलियों में जो कमल खिले हुए थे और वहाँ मधुर शब्द करते हुए जो जलपक्षी तैर रहे थे, उनसे वे

बावलियाँ ऐसी सुन्दर लगती थीं कि मानो उनमें मुस्कुराती हुई सुन्दर मुखवाली और ढीली होने से बजती हुई करघनी वाली स्त्रियाँ सुशोभित हों –

शुशुभिरे स्मितचारुतरानना: स्त्रिय इव श्लथशिञ्जितमेखला:।

विकचतामरसा गृहदीर्घिका मदकलोदकलोलविहङ्गमा:।। – रघु 9.37

दशम सर्ग में जहाँ देवताओं द्वारा भगवान् विष्णु की स्तुति की गई है, में कालिदास ने एक उपमा द्वारा यह बतलाया है कि गंगा की सभी धाराएँ भारतभूमि के विभिन्न क्षेत्रों से बहकर अन्तत: समुद्र में गिर जाती हैं– **"त्वय्येव निपतन्त्योघा जाहनवीया इवार्णवे''।** –रघु 10.26

इस महाकाव्य के त्रयोदश सर्ग में कालिदास ने समुद्र का बड़ा ही आकर्षक वर्णन किया है, जिसमें उन्होंने प्राचीन भारतीय परम्परा तथा पुराणों में वर्णित तथ्यों का समावेश किया है। इस सर्ग के प्रारंभ में ही भगवान श्री राम सीता जी से कहते हैं कि हे वैदेहि! इस फेन से भरे समुद्र को देखो, जिसे मेरे बनाए हुए पुल ने मलय पर्वत तक दो भागों में इस प्रकार बाँट दिया है, जैसे सुन्दर तारों से भरे हुए शरद् ऋतु के खुले आकाश को आकाशगंगा दो भागों में विभक्त कर देती है –

वैदेहि! पश्यामलयाद्विभक्त मत्सेतुना फेनिलमम्बुराशिम्।

छायापथेनेव शरत्प्रसन्नमाकाशमाविष्कृतचारुतारम्।। – रघु 13.2

समुद्र वर्णन क्रम में कालिदास इसकी उपयोगिता भी बतलाते हैं। भगवान् श्रीराम सीता जी से कहते हैं कि सूर्य की किरणें समुद्र से जल खींच खींचकर पृथ्वी पर बरसाती हैं। इसी से रत्न मिलते हैं, तथा अपने शत्रु बाड़वानल को यह अपनी गोद में पालता है और सुखदायक प्रकाश वाला चन्द्रमा भी इसी में से उत्पन्न हुआ है–

गर्भं दधत्यर्कचयोऽस्माद् विवृद्धिमत्राश्नुते वसूनि।

अबिन्धनं वह्निमसौ बिभर्ति प्रहलादनं ज्योतिरजन्यनेन।। – रघु 13.4

पर्यावरण बोध की दृष्टि से उपर्युक्त पद्य अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। यहाँ कवि ने यह दिखलाया है कि सूर्य के प्रकाश द्वारा समुद्र के जल का अवशोषण होकर ही बादल का निर्माण होता है, जो अन्तत: वर्षा करके पृथ्वी का कल्याण करता है यहाँ कालिदास की वैज्ञानिक दृष्टि झलकती है।

इस प्रसंग में कालिदास ने समुद्र के स्वच्छ जल का वर्णन भी साहित्यिक ढंग से किया है। तदनुसार, सृष्टि के आरम्भ में जब वाराह भगवान् पृथ्वी को पाताल से ले आ रहे थे, उस समय प्रलय से बढ़ा हुआ इसका स्वच्छ जल क्षणभर के लिए उनका घूघट बन गया था –

रसातलादादिभवेन पुंसा भुव: प्रयुक्तोद्वहन क्रियाया:।

अस्याच्छम्भ: प्रलयप्रवृद्धं मुहूर्तवक्त्राभरणं बभूव।।[8]

इस प्रकार महाकवि कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य के उपर्युक्त स्थलों पर जलीय पर्यावरण की परिशुद्धता के प्रति अपनी सचेष्टता दिखलाई है।

कुमारसंभवम् महाकाव्य का प्रारंभ ही कवि हिमालय के वर्णन से करते हैं, जो पूर्व और पश्चिम के समुद्र तक फैला हुआ है –

पूर्वापरौतोयनिधीवगाय स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः। – कुमार 1.1

इस महाकाव्य के पष्ठ सर्ग में कवि ने महाकोशी नदी के झरने का उल्लेख किया है। यहाँ शिव जी कहते हैं कि आपलोग कार्यसिद्धि के लिए हिमालय के ओषधिप्रस्थ नगर को जाइए और वहाँ से लौटने पर महाकोशी नदी के झरने पर आकर मुझसे मिलिएिगा –

तत्प्रयातौषधिप्रस्थं सिद्धये हिमवत्पुरम्।

महाकोशी प्रयातेऽस्मिन्संगमः पुनरेव नः।। – कुमार 6.33

इस महाकाव्य के दशम सर्ग में कवि ने गंगा नदी का मनोरम वर्णन किया है। कैलास पर्वत से होकर शंकर जी तथा पार्वती जी जब गंगा नदी के तट पर पहुँचे तब वहाँ पर गंगाजी की उठती हुई लहरें ऐसी लगती थी, जैसे अग्नि को आते देखकर प्रसन्न मन से वे अपनी लहरों के हाथों से उनका काम बनाने के लिए उन्हें दूर से ही बुला रही थी। [9]

उस कल्याणकारिणी, श्रमहारिणी, परम पवित्र तथा सबको तारने वाली गंगाजी के जल में डुबकी लगाकर अग्नि को बड़ा आनन्द मिला –

गंगावारिणि कल्याणकारिणि श्रमहारिणि।

स मग्नो निर्वृतिं प्राप पुण्यभारिणि तारिणि।। – कुमार 10.36

यहाँ कवि ने गंगा के जल के जो–जो विशेषण दिये हैं, वे जलीय पर्यावरण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं।

मेघदूत के प्रारंभ में ही कालिदास कहते हैं कि कुबेर के द्वारा शापित कोई यक्ष रामगिरि के वैसे आश्रमों में निवास करता था, जो जनक की पुत्री के स्नान से पवित्र जल वाला था –

यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु।

स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु।। – पूर्वमेघ 1

यक्ष मेघ से उसका मार्ग बतलाते हुए वर्षा जल का महत्त्व प्रतिपादित करता है कि वर्षा जल के अधीन ही कृषि का फल होता है। अतः हे मेघ! जब तुम माल प्रदेश को जाओगे तब वहाँ की भ्रूविलासानभिज्ञा रमणियाँ तुम्हे आँखों से पीयेंगी, क्योंकि खेती का फल तुम्हारे अर्थात् वर्षाजल के ही अधीन होता है –

त्वय्यायत्तं कृषिफलमिति भ्रूविलासानभिज्ञा।

प्रीतिस्निग्धैर्जनपदवधू लोचनैः पीयमानः।। – पूर्वमेघ 16

रेवा नदी के सुगन्धित जल को लेकर आगे बढ़ने की बात यक्ष ने मेघ से कही है।

तस्यास्तिक्तैर्वनगजमदै वासितं वान्तवृष्टि

जम्बूकुञ्जप्रतिहतरयं तोयमादाया गच्छे। – पूर्वमेघ–20

कवि ने यह बताने की कोशिश की है कि जल–प्रदूषित न हो, इसके लिए उसमें स्त्रोत अथवा धारा का होना आवश्यक है। जमका हुआ जल तो प्रदूषित हो ही जायेगा। जल को शुद्ध एवं स्वास्थ्यकर बनाने में जामुन के फल का बहुत योगदान रहता है। ऐसा जल अत्यन्त ही सुपाच्य होता है। इसीलिए मेघ को जामुन की कुञ्ज में बहती हुई रेवा नदी के जल को पीकर ही आगे बढ़ने का निर्देश कवि ने किया है।

आगे तुम्हे निर्विन्ध्या नदी मिलेगी, जो तरङ्गों के चलने से शब्द करते हुए पक्षियों की पंक्तिरूपी करघनी वाली, स्खलन के कारण सुन्दर रूप में बहनेवाली तथा भँवर रूपी नाभि को दिखानेवाली होगी - **वीचिक्षोभस्तनित विहग.... निर्विंध्याया:।**[10] यक्ष मेघ से सिन्धु नदी की क्षीणता को छोड़ने का उपाय करने का निर्देश देते हुए कहता है –

वेणीभूतप्रतनुसलिला तामतीतस्य सिन्धु:
पाण्डुच्छाया तटरुहतरु भ्रंशिभिजीर्णपर्णै:।
सौभाग्यं ते सुभग विरहावस्थया व्याजयन्ती
कार्यं येन त्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्य:।। – पूर्वमेघ 30

साथ ही कालिदास ने उज्जयिनी के वर्णन में शिप्रा नदी की शीतल वायु का मनोरम दृश्य प्रस्तुत किया हैं।
मालविकाग्निमित्र नाटक के प्रारंभ में कवि ने एक उपमा दी है, जो जलीय पर्यावरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। तदनुसार, जैसे बादल का जल समुद्र की सीपों में पहुंचकर मोती बन जाता है, वैसे ही सिखानेवाले की कला उत्तम शिष्य के पास पहुँचकर विकसित होती है –

पात्रविशेषे न्यस्तं गुणान्तरं व्रजति शिल्पमाधातु:।
जलमिव समुद्रशुक्तौ मुक्ताफलतां पयोदस्य।। – मालविका 1.6

इसी अंक में कालिदास ने समुद्र के स्थाइत्व में विविधता का प्रतिपादन किया है। गणदास राजा को देखकर यह कहता है कि ये मेरी आँखों को समुद्र के समान ज्यों के त्यों रहते हुए भी पल-पल में नवीन से दिखाई पड़ रहे हैं-

"सलिलनिधिरिव प्रतिक्षणं मे भवति स एव नवो नवोऽयमक्ष्णो:'' – मालविका 1.11

अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक के प्रथम अंक में महाकवि कालिदासने भगवान् भूतभावन अष्टमूर्ति शंकर के प्रति अपनी प्रणति अभिव्यक्त करते हुए लिखा है कि भगवान शिव उस जल के रूप में हमें प्रत्यक्ष दिखालाई देते हैं, जिसे ब्रह्मा ने सबसे पहले बनाया था। अर्थात् जल का सृजन इस सम्पूर्ण चराचर में सर्वप्रथम है – **"या सृष्टि: स्रष्टुराद्या"** इसी अंक में सूत्रधार कहता है कि ग्रीष्म ऋतु में जल में स्नान करना बड़ा आनन्ददायक है **"सुभगसलिलावगाहा:।**[11] महर्षि कण्व का आश्रम मालिनी नदी के मनोरम तट पर अवस्थित है। अपने सारथी से आश्रम की पहचान बताते हुए राजा कहते हैं कि यहाँ नदी-नालों पर से आने-जाने की राहों पर मुनियों के वल्कलों से टपकती हुई जल की रेखाएँ बनी हुई है।
चतुर्थ अंक में शकुन्तला की विदाई के समय, शाङ्र्गरव की इस उक्ति 'प्रियजनों को विदा देते समय जलाशय तक पहुँचाकर लौट जाना चाहिए' से प्राचीन भारतीय संस्कृति में जलाशय की अद्भुत महत्ता प्रकट होती है। पंचम अंक में राजा शकुन्तला का बिल्कुल अनजान समझकर कहते हैं कि अपने स्वच्छ जल को गन्दा करने के लिए तटवर्ती वृक्षों को ढाहने और तट को बहा ले जाने वाली नदी की भाँति तुम अपना कुल कलंकित करके मुझे भी क्यों विनाश की ओर ले जाना चाहती हो-

व्यपदेशमाविलयितुं किमीहसे जनमिमं च पातयितुम्।
कूलङ्कषेव सिन्धु: प्रसन्नमम्भस्तटतरुं च।।

अभिज्ञानशाकुन्तलम् - **5.21**

गौतमी कहती है कि शक्रावतार में शचीतीर्थ के जल को प्रणाम करते समय ही शकुन्तला अपनी अंगूठी खो दी होगी। इसी तथ्य का समर्थन राजा दुष्यन्त ने षष्ठ अंक में किया है– **"शचीतीर्थवन्दमानायाः सख्यास्ते हस्ताद् गङ्गास्त्रोतसि परिभ्रष्टम्।**[12]

शकुन्तला के वियोग में राजा दुष्यनत विदूषक से कहते हैं कि मित्र! जब वह (शकुन्तला) स्वयं मेरे पास आई, तब तो मैंने निरादर करके उसे लौटा दिया और अब उसके चित्र पर इतना प्रेम दिखा रहा हूँ, जैसे कोई भली–भाँति जल से भरी नदी को छोड़कर मृगतृष्णा की ओर दौड़ रहे हैं।

स्त्रोतोवहां पथिनिकामजलामतीत्य

जातः सखे! प्रणयवान्मृगतृष्णिकायाम्।।(6-16)

अन्त में कवि ने मारीच ऋषि के माध्यम से कहा है कि राजा की प्रजा के लिए इन्द्र मुसलाधार वर्षा जल प्रदान कर कृतार्थ करें।[13]

अस्तु, जीवन में जल की अनिवार्यता को ध्यान में रखकर मानव मात्र के लिए यह आवश्यक है कि वह जिस जल का उपयोग नहाने, खाना पकाने तथा पीने आदि में करता है उसकी शुद्धता एवं निर्मलता बनी रहे, क्योंकि दूषित जल के उपयोग से मानव स्वस्थ नहीं रह सकता। आज जलीय प्रदूषण के निरन्तर बढ़ोत्तरी के कारण नये–नये रोग मानव को पीड़ित कर रहे हैं। गंगा जैसी पवित्र एवं निर्मल नदी के महान नगरों के किनारे भयंकर प्रदूषण के फैलाव से गंगा का जल इतना प्रदूषित हो गया है कि वैज्ञानिक उसे स्नान करने लायक भी नहीं मानने लगे हैं, उसकी पेयता का तो सवाल ही नहीं है। यही कारण है कि प्रदूषण के प्रति जागरूक धार्मिक व्यक्ति भी गंगा में स्नान करने से परहेज करते हैं। यह स्थिति केवल गंगा की ही नहीं है अपितु जो नदी धार्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण माने जाने वाली यमुना सरयू, कावेरी, नर्मदा आदि नदियों की भी यही स्थिति है।

हमें यह सोचना होगा जो जल हमारे जीवन का जो पर्याय है वही यदि दूषित हो गया तो फिर हमारे जीवन का क्या हश्र होगा यह सहज ही बोधगम्य है। इस संदर्भ में वैदिक वाङ्मय एवं परवर्ती लौकिक साहित्य में जल के विविध प्रकार के उपयोग उसकी उत्पत्ति तथा उसके प्रदूषण से मुक्ति पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है। आज से हजारों वर्ष पहले कालिदास ने धुंए जल और प्रकाश और हवा के मिश्रण से इस जल की उत्पत्ति बतायी थी, वह आज भी शुद्ध और प्रदूषण मुक्त माना जाता है।

इसी तरह जल में जामुन के फल तथा तीव्र धारा से उसमें शुद्धता आती है। कालिदास के समय गंगा, सरयू एवं अन्य नदियों के जल प्रदूषित नहीं थे लोग अत्यन्त श्रद्धा के साथ मज्जन और पान करते थे। आज भी हमें मानव जीवन को स्वस्थ एवं नीरोग रखना है तो सबसे अधिक जल को प्रदूषण मुक्त रखने पर ध्यान देना होगा। आधुनिक वैज्ञानिकों के लिए जल को प्रदूषण मुक्त रखना एक चुनौती है वे इसके लिए लगातार प्रयासरत हैं। किन्तु उसमें समाज का सहयोग भी कम महत्त्व नहीं रखता। इस संदर्भ में जिन धार्मिक भावनाओं को प्रश्रय देने के कारण यज्ञ, पूजा एवं अन्य संस्कारों के सम्पादन के अनन्तर अवशिष्ट वस्तुओं को हम गंगा में प्रवाहित करने को ही आवश्यक विधिव मानते हैं उसपर हमें पुनर्विचार करना होगा कि क्या यह धार्मिक मान्यताओं के कारण गंगा जैसी पवित्र नदी के जल को अधिकाधिक प्रदूषित करने में हम महत्त्वपूर्ण सहयोग करते हैं। उसका विकल्प ढूंढना होगा। ऐसे कदमों पर नियंत्रण करना होगा। इसी तरह से नदी के किनारे शौचादि करना, उसी में गंदे कपड़े धोना, जानवरों को नहाना आदि कार्यों से ही जल–प्रदूषण में विस्तार

आता है- जिसके लिए विविध वैज्ञानिक उपाय हमें करने होंगे और ऐसा वातावरण बनाना होगा कि सभी सामान्य वर्ग के लोग इस ओर जागरूक होकर स्वस्थ जीवन यापन हेतु जल को प्रदूषित होने से बचाने में पूरी तत्परता के साथ प्रवृत्त हो सकें। इससे न केवल मानवीय जीवन यापन होगा, वरन् ऋषियों के संदेश का भी अनुपालन होगा और अगली पीढ़ि के लिए महान् उपकार होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ : -

1. अथर्ववेद-3/12/9
2. ऋग्वेद 10/9/4
3. अथर्ववेद-3/13/5
4. अथर्ववेद-3/13/6
5. ऋग्वेद - 10/9/3
6. ऋग्वेद - 7.49
7. ऋग्वेद 7.50.3
8. रघुवंशम् - डॉ. कृष्णमणि त्रिपाठी-पृ. 431
9. कुमारसम्भव 10.32
10. मेघदूतम् पूर्वमेघ -29
11. अभिज्ञाशाकुन्तलम् - 1.3
12. अभिज्ञाशाकुन्तलम् - 6.12 के बाद का गद्य
13. अभिज्ञाशाकुन्तलम् - 7.34